दहलीज

रमेश पोखरियाल

हिन्दी ADDA

दहलीज

https://www.hindiadda.com/dahaleej-2/

अनुरधा आज बहुत प्रसन्न थी। बहुत दिनों से खुशियाँ जैसे इस घर से रूठी हुई थीं। कहीं से भी कोई ऐसा समाचार न मिलता जिससे जीवन में नवरस का संचार हो। एक समय के खुशहाल परिवार को जैसे किसी की नजर लग गई थी। लेकिन आज अनुरधा खुश थी और जानती थी उसकी ये खुशी संक्रमित होकर पूरे घर में फैल जाएगी। उसने घड़ी की ओर निगाह डाली, दो बज रहे थे। उसका शहर यहाँ से चार घंटे के रास्ते पर ही था। अगर तीन बजे वाली बस भी मिले तो सात बजे तक वह अपने घर पहुँच सकती है।

'हाँ यही ठीक रहेगा।' उसने सोचा और वहाँ से गुजरते एक ऑटो वाले को हाथ दिया। ऑटो तेजी से अंतर्राज्यीय बस अड्डे की ओर दौड़ पड़ा।

दोनों ओर कहीं गगनचुंबी इमारतें, तो कहीं बड़े-बड़े शोरूम और उनके बाहर खड़ी चमचमाती हुई स्वदेशी और विदेशी लग्जरी गाड़ियाँ। ऑटो की गति के साथ-साथ सब कुछ पीछे छूटता जा रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे सब तीव्र गति से भाग रहा है।

दिल्ली है ही ऐसा शहर। यहाँ जब देखो हर कोई भागता-दौड़ना ही दृष्टिगोचर होता है। चैन से दो पल थम जाना किसी को मंजूर नहीं। रुक गए तो जिंदगी की दौड़ में पिछड़ जाने का डर सा बना रहता है सबके मन में। बस अड्डे तक पहुँचते-पहुँचते शहर की यही बेचैनी अनुराधा के तन मन में भी व्याप गई। वहाँ पहुँची तो उसके शहर के लिए कोई बस न थी। वह प्रतीक्षा करने लगी। उसे बहुत प्रतीक्षा न करनी पड़ी। पंद्रह मिनट बाद ही रोडवेज की एक बस आती नजर आई। अनुराधा ने चैन की साँस ली। बस न मिलती तो आज उसे यहीं रहना पड़ता वह भी अनुकूल के किन्हीं रिश्तेदारों के घर पर। दिल्ली की सिटी बसों में सफर करना उसके वश का न था और ऑटो में बैठकर ऐसे लगता जैसे आसपास चलने वाली सभी गाड़ियों का धुआँ उसकी साँसों के साथ उसके अंदर तक समा गया हो।

अनुराधा बस में बैठ गई। थोड़ी ही देर में दिल्ली पीछे टूटने लगा लेकिन कंक्रीटों के जंगल ने बहुत दूर तक पीछा न छोड़ा था। जिस गति से बस दिल्ली को छोड़ आगे बढ़ रही थी उसी गति से अनुराधा का मन भी पीछे की ओर दौड़ रहा था।

अनुराधा को वह दिन आज भी याद है जब बी.ए. अंतिम वर्ष की पढ़ाई के दौरान उसने कॉलेज के वार्षिकोत्सव में भाग लिया था। बचपन से ही उसकी नृत्य में रुचि को देखते हुए स्कूल में उसकी संगीत व नृत्य की अध्यापिका ने उसकी मदद की।

निम्न-मध्यवर्गीय परिवार में जन्मी अनुराधा अपने माता-पिता की पाँच संतानों में एक थी। भाई-बहनों में चौथी संतान अनुराधा को ईश्वर ने जैसे बहुत फुरसत से बनाया था। लगता था जैसे पाँचों भाई बहनों में बाँटी जाने वाली खूबसूरती अकेले उसी के हिस्से में आ गई हो। भाई बहनों के पुराने कपड़े पहन कर बड़ी होने वाली अनुराधा कभी कुछ अच्छा पहन लेती तो राजकुमारी समान दिखती। उम्र बढ़ने के साथ-साथ अनुराधा को भी अपनी इस खूबसूरती का भान होने लगा था। और यहीं एहसास गर्व का भाव लेकर उसकी नस-नस में समा चुका था।

नृत्य करने का उसे छुटपन से ही शौक था। स्कूल में थी तो उसके बिना स्कूल का सांस्कृतिक कार्यक्रम अधूरा माना जाता। प्रारंभ में उसकी प्रतिभा को देखते हुए स्कूल की शास्त्रीय नृत्य की औपचारिक शिक्षा देने की भी बात कही लेकिन अनुराधा के माता-पिता इस स्थिति में न थे कि वह ऐसा कर पाते। उनके ना करने पर शिक्षिका ने ही स्वयं के ज्ञान के आधर पर उसे नृत्य सिखाना आरंभ किया। अपने हावभाव व मुखमुद्रा से अनुराधा किसी भी नृत्य को जीवंत बना देती।

और स्कूल से आरंभ हुआ यह सिलसिला कॉलेज तक भी नहीं छूटा था। उम्र के साथ-साथ जहाँ उसके सौंदर्य में भी निखार आया था वहीं निरंतर प्रयास से उसकी नृत्य प्रतिभा भी निखर गई थी।

और ऐसे ही किसी समारोह में अनुकूल की निगाहें उस पर पड़ी तो ठहर कर रह गई। अनुकूल के पिता शहर के गणमान्य व्यक्तियों में थे। कॉलेज के वार्षिकोत्सव पर उन्हें बतौर मुख्य अतिथि आमंत्रित किया गया। अपनी शिक्षा पूरी करने के पश्चात इन्हीं दिनों अनुकूल ने पिता के व्यवसाय में हाथ बँटाना आरंभ किया था। और उस दिन पिता के साथ वह भी कॉलेज के समारोह में भाग लेने पहुँच गया था। अनुराधा ने उस दिन सरस्वती वंदना से लेकर लोकनृत्य, नृत्य नाटिका इत्यादि में भाग लिया था।

सरस्वती वंदना में जहाँ उसने 'वर दे वीणा वादिनी' के सुरताल पर अपने नृत्य की छटा बिखेरी वहीं नृत्य नाटिका में राधा की भुवनमोहिनी भाव-भंगिमा से कृष्ण को रिझाया, राजस्थानी नृत्य में धानी रंग की ओढ़नी की छटा उसके सौंदर्य को द्विगुणित कर रही थी।

अनुकूल तो अनुराधा के सौंदर्य और इसकी नृत्य कला की भावभंगिमा को देख समाधिस्थ सा हो गया था। उसकी निगाह अनुराधा पर पड़ी तो वहीं अटक गई। वह तो ताली बजाना भी भूल जाता। अनुराधा की हर प्रस्तुति के पश्चात उसकी तंद्रा तब टूटती जब उसे तालियों की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ती।

'पापा मैं उस लड़की से विवाह करना चाहता हूँ।' घर आते ही अनुकूल अपने मन की बात कहने से अपने आप को रोक न पाया।

'कौन सी लड़की?' पिता जानबूझ कर अनजान बन गए। मन ही मन समझ रहे थे कि किस लड़की की बात कर रहा है अनुकूल।

'वही जिसने सरस्वती वंदना की थी।'

'कौन है वो लड़की**?**'

'मैं नहीं जानता। मैंने तो आज उसे पहली बार देखा।'

'नहीं जानते तो पता करो। यों बिना जाने-पहचाने विवाह करोगे क्या उससे।'

अनुकूल खुशी से उछल पड़ा। लेकिन उसकी यहे खुशी तब काफूर हो गई जब अनुराधा की पारिवारिक पृष्ठभूमि को देखकर अनुकूल के पिता ने इस रिश्ते के लिए सिरे से इनकार कर दिया।

'क्या आप इसलिए मेरा विवाह अनुराधा से नहीं करना चाहते क्योंकि वह गरीब है। आपकी दहेज की अभिलाषा पूरी नहीं कर सकते?'

आरोप से पिता तिलमिला गए।

'मैंने कह दिया यह विवाह नहीं हो सकता। समाज में हमारा भी कुछ रुतबा है।'

'तो आप अपने रुतबे को अपने पास रखिए। अनुराधा से विवाह कर अलग रह लूँगा। कहीं नौकरी कर अपने लिए रोजी-रोटी का प्रबंध कर लूँगा।'

पिता को अपना दिल बैठता सा लगा। अनुकूल से ऐसे उत्तर की आशा न थी उन्हें। समझ गए गुस्से में बात बिगड़ सकती है। प्यार से ऊँच-नीच समझाना आरंभ किया। अपनी बिरादरी, मान-सम्मान की दुहाई दी। लेकिन अनुकूल टस से मस न हुआ।

बेटे की जिद ने आगे पिता ने घुटने टेक दिए। लेकिन मन से तैयार न हो पाए। अनुकूल से बड़े दोनों बेटों का विवाह वह अपनी बराबरी के घरों में कर चुके थे। अनुकूल भाई-बहनों में सबसे छोटा होने के कारण माँ का लाड़ला था इसलिए थोड़ा सा जिद्दी भी था।

शहर के प्रतिष्ठित घराने से अनुराधा के लिए रिश्ता आया तो उसके माता-पिता बौरा गए। उनके घर में तो ऐसे मेहमानों को बिठाने के लिए जगह तक न थी। उनके घर की हालत देख अनुकूल के पिता ने सिर पीट लिया। कैसे कर पाएँगे ये लोग उनकी प्रतिष्ठा के अनुसार ब्याह। लेकिन हल तो निकालना ही था। लड़की वालों का खर्चा भी स्वयं ही उठा लिया। अनुराधा के सपनों को तो जैसे मजबूत पंखों की उड़ान मिल गई। मुख पर गर्वीली मुस्कान ठहर गई। वह अब अपने आप को घर में सर्वश्रेष्ठ समझने लगी थी।

शुभ मुहुर्त में अनुराधा अनुकूल की संगिनी बन अपनी ससुराल आ गई। विवाह समारोह की भव्यता देख अनुराधा के परिवार वालों की आँखें तो फटी रह गई। वह तो इस चकाचौंध से इतना घबरा गए थे कि उपेक्षित से समारोह स्थल के एक कोने में बैठे रह गए।

और अनुराधा, वह तो दुल्हन के वेश में आसमान से उतरी परी के समान लग रही थी। स्वर्णाभूषणों और जरीदार वस्त्रों से लदी-फदी अनुराधा स्वयं को किसी राजकुमारी से कम न समझ रही थी।

अनुराधा ससुराल आ गई। अनुकूल को तो जैसे मनमाँगी मुराद मिल गई। अपना पूरा मन उड़ेल कर रख दिया उसने अनुराधा के पास। इस प्यार से अनुराधा अभिभूत हो उठी लेकिन फिर भी मन के किसी कोने में एक फाँस गड़ गई थी। अनुकूल का संयुक्त परिवार था। उसकी माँ व दोनों भाभियां उन्हीं के समान समृद्ध परिवार से थी। बहनें भी अपनी बराबरी के परिवारों में ब्याही थी। कुछ तो ईर्ष्यावश और कुछ स्वभावानुसार दोनों भाभियों को अनुराधा फूटी आँख न सुहाती।

रूपगर्विता अनुराधा को यह उपेक्षा बहुत बुरी लगती। घर परिवार के रीति रिवाज आदि को लेकर भी उसे ताने सुनने पड़ते।

'तुम क्या जानो बड़े घरों के रिवाज, तुम्हारे घर में तो ऐसा होता न होगा।' एक दिन बड़ी भाभी ने कह दिया तो अनुराधा ने मुँह फुला लिया। इन्हीं सभी छोटी-मोटी बातों को लेकर घर में तनाव चलता रहता। अनुराधा से विवाह करने पर माता-पिता भी अनुकूल से बहुत प्रसन्न तो थे नहीं, इसलिए बड़ी बहुओं का ही पक्ष लिया जाता।

'मैं अब इन लोगों के साथ नहीं रह सकती।' अनुराधा ने एक दिन ऐलान कर दिया। जानती थी अनुकूल उसकी बात न टालेगा।

अनुकूल ने पिता से बात की। अनुकूल की बात सुन पिता को धक्का तो लगा लेकिन रोज-रोज की कलह से तंग आ उन्होंने भी बँटवारा कर दिया। अनुराधा अब खुश थी। उसका अनुकूल सिर्फ उसका था और वह अपने घर की रानी थी।

सात-आठ वर्ष बीत गए। अनुराधा अब दो बच्चों की माँ बन चुकी थी। लेकिन शरीर के लावण्य में कोई कमी न आई थी। अनुकूल ने तो उसके लिए कभी कोई कमी न होने दी। नौकरों-चाकरों से घिरी अनुराधा को अब अपने मायके जाना भी न भाता। वहाँ ऐसी सुख सुविधाएँ तो थी नहीं। माता-पिता भाई बहनों को अनुराधा का ये बड़प्पन अच्छा न लगता लेकिन वह कर भी क्या सकते थे।

लेकिन यह सब सदा न रह पाया। एक दुर्घटना में बुरी तरह घायल अनुकूल की जान तो बच गई लेकिन सिर की अंदरूनी चोट के प्रभाव से वो बच न पाया।

बुद्धि क्षीण होने लगी। जहाँ-तहाँ चक्कर खाकर गिर पड़ता। अनुकूल के पिता पहले ही स्वर्ग सिधर चुके थे और दोनों भाई अपनी गृहस्थी और व्यापार में व्यस्त थे। इस समय उसकी सहायता करने वाला कोई न था।

अनुकूल की बीमारी का अब उसके व्यापार पर भी पड़ने लगा। कुछ दिनों तक तो पिछले वर्षों की बचत से घर और व्यापार चलता रहा लेकिन अब समस्याएँ सिर उठाने लगी थी। अनुकूल के इलाज पर भी काफी पैसा खर्च हो रहा था लेकिन कुछ खास सुधार होता न दीखता था।

आरामतलब और खुला खर्च करने वाली अनुराधा के लिए ये आघात बज्र समान था। अभी तक तो उसे कठिनाइयाँ झेलने की आदत ही न थी। अनुकूल बीमारी और परेशानियों के चलते चिड़चिड़ा हो गया था तो अनुराधा से भी ये स्थिति सहन न होती। और दोनों के चिड़चिड़ेपन की गाज गिरती दोनों बच्चों पर। घर का माहौल तनावपूर्ण हो चला था।

और ऐसे समय ने उन्हें सहारा दिया अनुकूल के मित्र अभिषेक ने। अभिषेक, अनुकूल का बचपन का मित्र। अनुकूल की भाँति संपन्न परिवार से तो न था लेकिन बुद्धि चातुर्य में अनुकूल से कई कदम आगे। पढ़ाई पूरी करने के उपरांत नौकरी करने के स्थान पर उसने स्वयं के व्यवसाय का रास्ता चुना। बातें उसकी ऐसी मनमोहक और अपना काम निकालने का ऐसा चातुर्य कि किसी भी विभाग में उसका कोई काम न रुकता। इसी के चलते कम ही समय ने उसने अपने व्यवसाय को ठीक-ठाक स्थापित कर लिया।

अनुकूल के बिखरते व्यवसाय को सँभालकर उसकी साख का इस्तेमाल कर अपना व्यवसाय बढ़ाने का अभिषेक के लिए ये अच्छा मौका था। वह समझ रहा था कि अनुकूल के लिए अपने व्यवसाय को चला पाना अब संभव न था और ऐसे में उसने अपने साथ लिया अनुराधा को।

'भाभी आप पढ़ी-लिखी हैं, समझदार है आप क्यों नहीं अनुकूल की मदद करती?' एक दिन उसने अनुराधा से कहा तो अनुराधा के मन की सुप्त आकांक्षाएँ जागृत हो उठीं।

उसे याद आया उसके नृत्य के कारण कितने लोग उसे घेरे रहते थे। वह चाहती तो उसी को आगे कर अच्छा नाम कमा सकती थी। लेकिन छोटी उम्र में ही विवाह होने के बाद वह तो सब कुछ गँवा बैठी। यद्धपि अनुकूल ने उसे कोई कमी न होने दी और उसे रानी बना कर रखा लेकिन इसमें उसके स्वयं के अस्तित्व का क्या हुआ? उसकी प्रतिभा का क्या हुआ? वह तो अब एक सामान्य गृहणी बन कर रह गई।

नृत्य तो अब इतने वर्षों से बिसरा ही चुकी थी लेकिन क्या अब पति का व्यवसाय सँभाल वह अपने अस्तित्व को पुनर्जीवित कर सकती है? यह विचार बार-बार उसके मन में आता।

अनुकूल ने कभी अनुराधा को लेकर इस तरह न सोचा था। उसने तो यही चाहा था कि अपनी योग्यता का प्रमाण अनुराधा अपने घर, अपने बच्चों की परवरिश में दे। और अनुराधा भी इस व्यवस्था से नाखुश रही हो, ऐसा उसे कभी न लगा। तो क्या अब वह उसे इजाजत दे दे कि वह व्यवसाय सँभाल ले।

अभिषेक के बार-बार कहने पर अनुराधा का मन भी अब इस ओर झुकने लगा। उसने अनुकूल से अनुनय-विनय कर आखिर इसकी इजाजत ले ही ली।

अनुराधा घर की दहलीज से बाहर निकल आई। अभिषेक और अनुकूल दोनों ही उसे उसके काम में सहायता करते। लेकिन बहुत मेहनत के बाद भी काम ठीक से आगे न बढ़ पाया था। बस किसी तरह गृहस्थी की गाड़ी खिंच रही थी। अनुराधा अब धीरे-धीरे हताश होने लगी थी।

और इन्हीं दिनों अभिषेक ने उन्हें एक पार्टनरशिप में एक नए व्यवसाय का सुझाव दिया।

'क्यों न हम निर्यात का व्यवसाय करें?'

'लेकिन किस चीज का निर्यात? ऐसा कौन सा उत्पाद है हमारा, जिसका निर्यात किया जा सके?'

'यहाँ का हैंडीक्राफ्ट। तुमने देखा आस-पास के गाँवों में महिलाएँ बेत, सन इत्यादि से कितने सुंदर-सुंदर उत्पाद बनाती हैं। बस उन्हें थोड़ा सा प्रोत्साहन देना होगा उनके उत्पाद को निखारना होगा और हो गया हमारा उत्पाद तैयार। विदेशों में तो बहुत माँग है हैंडीक्राफ्ट की।' अभिषेक उत्साहित था।

'और फिर भाभीजी आप महिला हैं, कलाक्षेत्र से हैं। उन उत्पादों में आप अपनी कल्पना के रंग भरिए आप देखिए हम कितना सफल होते हैं।'

अनुराधा को ये काम अच्छा लगा। उसके मन के अनुरूप भी था और ऊपर से अभिषेक ने इतने सब्जबाग दिखाए कि अनुराधा का मन कुलाँचें भरने लगा।

और आज उसी कंपनी के निर्यात का लाइसेंस लेने अनुराधा अभिषेक के साथ दिल्ली आई थी। पहले अनुकूल को भी साथ आना था लेकिन अस्वस्थता के चलते वह न आ पाया।

अनुराधा को अभिषेक का यह आचरण अजीब सा लगा, जब कार्यालय में अभिषेक ने बात करने के लिए उसे आगे कर दिया। यों तो वह इस व्यवसाय में अभिषेक की पार्टनर थी और औपचारिकताएँ पूर्ण करने उसे वहाँ पर उपस्थित होना आवश्यक था। लेकिन फिर भी उसे लगा कि अभिषेक को ही अधिकारियों से बात करनी चाहिए थी।

अपने मन के संशय को उसने ये सोच कर दूर किया कि शायद अभिषेक उसे ऑफिस और काम के तौर तरीके सिखाना चाहता हो।

इन्हीं सब यादों में खोई अनुराधा कब अपने घर घर पहुँच गई उसे समय का एहसास ही न हुआ। अनुराधा की खुशी से अनुकूल भी खुश हुआ। बहुत समय के बाद घर में खुशी का एक पल आया था। 'ईश्वर करे अनुराधा को सफलता मिले।' उसने मन ही मन भगवान से प्रार्थना की। वैसे भी अपनी ये स्थिति होने के बाद उसे सिर्फ ईश्वर पर ही भरोसा था।

अभिषेक के पूर्वानुमान को सही साबित करता हुआ ये व्यवसाय खूब फला फूला। जैसे-जैसे व्यवसाय बढ़ता गया वैसे-वैसे अनुराधा व्यस्त रहने लगी और अनुकूल उपेक्षित।

अनुराधा का अधिकांश समय अपने व्यवसाय को सँजोने में ही जाता। अभिषेक से उसकी मुलाकातें बढ़ने लगी थी। काम के चलते उसे अक्सर घर से बाहर रहना पड़ता।

आरंभ में तो अनुकूल कुछ न बोला लेकिन जब बच्चों की उपेक्षा होने लगी तो दबी जुबान से उसने विरोध करना शुरू किया। लेकिन अनुराधा पर तो सफलता का नशा चढ़ चुका था।

हर दूसरे महीने होने वाले देश-विदेश के दौरे, नए-नए लोगों से परिचय, अनुराधा के तो पैर ही जमीन पर न थे। अनुकूल की बात उसे कहाँ सुनाई देती। उसके कानों में पड़ते अभिषेक के तारीफ भरे स्वर, व्यापार संबंधित इष्ट मित्रों के स्वर जो अनुराधा की प्रशंसा के पुल बाँध देते।

'भाभी! आप के हाथ में तो पारस है। पत्थर भी छू लेती हैं तो सोना हो जाता है।' कहते-कहते एक दिन अभिषेक ने अनुराधा के दोनों हाथ अपने हाथ में ले लिए।

'भाभी आप जिससे भी मिल लो वो काम होना तो पक्का ही समझो। आप नहीं जानती कितनी भाग्यशाली हैं आप मेरे लिए।'

और ऐसी ही न जाने कितनी बातें। अनुराधा अभिभूत हो उठती। गर्व, जिसने अब अभिमान का रूप ले लिया था, से कंधे और ऊँचे उठ जाते, गर्दन तन जाती।

ढाई-तीन वर्ष पंख लगा कर उड़ गए। व्यापार में इजाफा हुआ तो पैसा भी बरसने लगा। अनुराधा ने कभी अभिषेक से हिसाब न माँगा। हिसाब-किताब उसे आता भी न था। यों भी अभिषेक ने कोई कमी न की थी उसके लिए। आँख मूँद कर जहाँ वह कहता वहाँ हस्ताक्षर कर देती।

अनुकूल की शिकायतें बढ़ी तो अनुराधा ने दोनों बच्चों को हॉस्टल में डाल दिया। कुछ तो काम न कर पाने की कुंठा और कुछ बीमारी ने अनुकूल की स्थिति को और बुरा कर दिया। अनुराधा की स्वच्छंदता अब उसे खलने लगी थी। कभी-कभी तो उसे अभिषेक पर भी शक होता। उसे शंका होती कि कहीं वह अनुराधा को इस्तेमाल तो नहीं कर रहा?

मन में कई तरह के विचार आते। अभिषेक यों तो उसके बचपन का मित्र था लेकिन जिस तरह से अचानक ही उसने इतना बड़ा व्यापार स्थापित कर लिया था, उसके कार्यकलापों पर शंका ही होती।

अभिषेक और अनुराधा अक्सर बाहर साथ-साथ जाते। आरंभ में तो अनुकूल को अनुराधा का घर से बाहर निकलना व्यापार की आवश्यकता लगता लेकिन अब उसे महसूस होने लगा था कि अनुराधा घर से बाहर निकलने के बहाने तलाशती है। अभिषेक के साथ बाहर जाने की बात सुनते ही उसका चेहरा चमक उठता। आँखें मुस्कराने लगती। अनुकूल मन ही मन कुढ़ उठता, कैसे-कैसे ख्याल मन में आने लगते। अनदेखा अनजाना सा कुछ बंद आँखों में सपना बन कर समा जाता। अनुकूल घबरा कर आँखें खोल देता। क्या अनुराधा और अभिषेक करीब आ रहे हैं? अभिषेक एक चतुर खिलाड़ी है। अनुराधा उसकी बातों से प्रभावित हो जाती है। उसके विरुद्ध कुछ भी सुनने को तैयार नहीं वह।

'अनुराधा तुम जानती हो तुम्हारे व्यवसाय में कितना लाभ हो रहा है?' एक दिन अनुराधा को अच्छे मूड में देख अनुकूल ने पूछ लिया।

'नहीं, ये हिसाब तो अभिषेक ही रखते हैं। मुझे तो सिर्फ ये पता है कि बिजनेस अच्छा चल रहा है।' अनुराधा का स्वर उत्साह से भरा था।

'लेकिन तुम्हें हिसाब-किताब देखना तो चाहिए।'

'क्यों? अभिषेक पर पूरा भरोसा है मुझे।'

'खुली आँखों का अंधापन ठीक नहीं अनुराधा। अभिषेक बहुत चतुर है। तुम्हें देखना चाहिए।'

'तुम्हें तो न जाने क्या प्रॉब्लम है उससे? घर बैठे-बैठे यूँ ही परेशान होते हो तुम।'

और अंततः ये बहस झगड़े पर समाप्त हुई। अनुराधा पैर पटकती घर से बाहर निकल गई।

जब भी अनुकूल अभिषेक को लेकर कोई बात कहता उसका हश्र यही होता। अनुराधा अभिषेक के विरुद्ध कुछ न सुन पाती। अब तो उसे अनुकूल से अधिक अभिषेक पर भरोसा था।

दो-तीन वर्ष और बीत गए। अनुराधा अब घर में मेहमान बनकर ही आती। या यों कहें कि उसका घर आने का मन न करता। लोग घर में रहने का बहाना ढूँढ़ते हैं वह घर से बाहर रहने का बहाना ढूँढ़ती। अभिषेक भी अब अपने परिवार को दिल्ली ले गया था।

यहाँ से अपना पूरा व्यवसाय समाप्त कर दिया था उसने। बस एक पैतृक घर था जिसमें उसके बड़े भाई व उनका परिवार रहता। माता-पिता भी उन्हीं के साथ रहते।

'क्यों न हम भी यहाँ छोड़कर दिल्ली ही चलें?' एक दिन अनुराधा ने अनुकूल से अपने मन की बात कह दी।

उसकी बात सुन अनुकूल अंदर तक सुलग उठा लेकिन बोला कुछ नहीं। शांतिपूर्वक दिल्ली जाने से मना कर दिया।

'लेकिन क्यों? वहाँ जाकर हम अपना पूरा ध्यान व्यवसाय पर केंद्रित कर सकते हैं। अभी तो बार-बार छोटे-छोटे काम के लिए दिल्ली जाना पड़ता है और ध्यान घर पर ही लगा रहता है।'

'तुम्हारा ध्यान! और घर पर!' अनुकूल के चेहरे पर विद्रूप भरी मुस्कान घिर आई।

'तुम्हें तो तब भी घर का ध्यान नहीं रहता जब तुम यहाँ पर रहती हो।'

अनुराधा एक बार फिर कुढ़ गई। लेकिन अब उसने घर आना और भी कम कर दिया। शायद एक फ्लैट खरीद लिया था उसने दिल्ली में।

अभिषेक आजकल एक नए व्यवसाय को आरंभ करने की तैयारी में था। अब उसके साथ कुछ नए लोग और जुड़ गए थे। अनुराधा अब अपने आपको उपेक्षित महसूस करने लगी थी लेकिन अब तक वह अभिषेक पर इतनी निर्भर हो चुकी थी कि अपना काम स्वयं के बूते पर नहीं कर सकती थी।

आखिर एक दिन पुराना कारोबार बंद हुआ उसका जो भी पैसा था उससे नया कारोबार आरंभ हुआ। नए कारोबार में अनुराधा और अभिषेक के अलावा दो और साझेदार हैं, ऐसा अनुराधा को बताया गया। कागजों पर ढेर सारे हस्ताक्षर करते हुए अनुराधा का मन गर्व से फूल उठा। अभिषेक पर अंधविश्वाश करने वाली अनुराधा ने यह तक न देखा कि वह किन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर कर रही है।

पुराना ऑफिस छोटा पड़ रहा था इसलिए नई जगह पर बड़ा ऑफिस लिया गया। ऑफिस में काम चल रहा था। अनुराधा इतने दिनों के लिए अनुकूल के पास चली आई।

'सुना है नया काम शुरू किया है**?**'

'हाँ, पुराने काम में ज्यादा फायदा नहीं था अब।'

'ऐसा अभिषेक ने कहा होगा?'

'फिर हो गए तुम शुरू। अभिषेक से इतनी चिढ़ क्यों है तुम्हें?'

'अच्छा छोड़ो, बताओ तो नई फर्म में कितने की पार्टनर हो?'

'मुझे क्या पता? अभिषेक ने ही सारे कागजात तैयार किए थे।'

'फिर तो भगवान ही मालिक है।'

'तुम फिर शुरू हो गए।'

बस यही कुछ बातचीत हुई दोनों के बीच और वह भी बहस और तकरार के साथ समाप्त हुई।

आरंभिक कुंठाओं के पश्चात अनुकूल भी सँभलने लगा था। माँ और भाइयों ने जब उसकी ये हालत देखी तो पहले पहल तो अनुराधा के डर से किसी ने हस्तक्षेप न किया लेकिन बाद में जब अनुकूल को यों ही उपेक्षित पड़े देखा तो सभी ने उसकी मदद को हाथ बढ़ाया। अनुराधा के व्यवहार से आहत अनुकूल को आशा की एक किरण नजर आई।

भाइयों की मदद से वह अपने व्यवसाय को पुनर्जीवित करने के प्रयास में लग गया। अनुराधा से उसने जानबूझ कर इसका जिक्र न किया। जानता था कि बड़े-बड़े सपने देखने वाली अनुराधा को उसका ये छोटा सा प्रयास पसंद न आएगा। अनुराधा जिस राह पर चल पड़ी थी उससे उसका वापस लौटना भी उसे मुश्किल ही लगता।

मानव मन के लालच की भी कोई सीमा नहीं। एक समय था जब अनुराधा के पास कुछ न था। ऐसे घर में जन्म लिया था जहाँ बमुश्किल दो जून की रोटी ही मिल पाती। किस्मत ने पलटा खाया और वह अनुकूल की पत्नी बन सुविधासंपन्न घर में आ गई। अनुकूल ने भी उसे कभी कोई कमी न होने दी लेकिन उसी अनुकूल की परिस्थितियाँ विपरीत हुई तो अनुराधा ने मुँह फेर लिया। भूल गई उस समय को जो उसने अनुकूल के साथ बिताया था। जिस अनुकूल के नाम पर आज वह इन ऊँचाइयों पर थी, वही अनुकूल उसे आज नालायक, निकम्मा इनसान प्रतीत होता।

अनुकूल की भाभियाँ और माँ अनुराधा को कोसती लेकिन अनुकूल उन्हें चुप करा देता।

'उसने तो व्यवसाय चलाने की ही कोशिश की। अब इस कोशिश में वह बहुत आगे निकल गई तो उसका क्या कसूर। उसका काम ही इतना फैला हुआ है कि उसे फुरसत ही नहीं मिलती अब।' माँ के अनुराधा के विरुद्ध कुछ कहने पर अनुकूल ने शांति से जवाब दिया तो उन्होंने सिर पीट लिया।

'कैसा इनसान है अनुकूल तू? वह तुझे इतना दुख दे रही है और तू है कि फिर भी उसी की तरफदारी कर रहा है। तूने तो लगता है उसे माफ कर दिया लेकिन ईश्वर उसे कभी माफ नहीं करेगा। याद रखना बेटा भगवान की लाठी में आवाज नहीं होती।' और उन्होंने अपने दोनों हाथ ऊपर की ओर उठा लिए।

अनुकूल जानता था माँ के मन की तड़प। क्या ये तड़प उसके मन में न थी? क्या वह नहीं जल रहा था अपनी ही आग में? ऐसा नहीं था। अनुकूल को जब भी बच्चों की याद आती वह तड़प उठता। अनुराधा के लिए उसे अफसोस होता। चिंता होती। वह अपनी चिंता प्रकट भी करता लेकिन अनुराधा पर कोई असर होता न दीखता था।

उसे उम्मीद थी कि अनुराधा एक दिन वापस अवश्य आएगी। और उसके मन की बात सच साबित हुई। अनुराधा वापस लौटी लेकिन किस हालत में।

इस बार अनुराधा दिल्ली गई तो शीघ्र ही वापस भी लौट आई। चेहरे का रंग उड़ा हुआ था। अनुकूल ने भी उसे अधिक कुरेदने की कोशिश नहीं की।

अनुराधा चाहती थी अनुकूल कुछ पूछे और अनुकूल अनुराधा के बोल फूटने की प्रतीक्षा कर रहा था। जानता था अनुराधा बहुत दिन तक चुप नहीं रह पाएगी।

उधर, अनुराधा हैरान थी, परेशान थी। अनुकूल चुप था। उसकी ये अनपेक्षित शांति अनुराधा के मन को बेचैन कर रही थी।

एक सप्ताह बीत गया। दोनों में कोई कुछ न बोला। अंततः हार कर अनुराधा ने ही बात आरंभ की।

'मैं सोच रही थी कि बच्चों को हॉस्टल से वापस बुला लूँ।'

'लेकिन उन्हें कौन रखेगा यहाँ पर? तुम तो चली जाओगी कुछ ही दिनों में वापस।' अनुकूल ने कनखियों से उसकी ओर देखा। लगा अनुराधा बहुत कुछ कहना चाहती है।

'मैं नहीं जाऊँगी अब कहीं।' अनुराधा के स्वर किसी गहरे कुएँ से आता प्रतीत हुआ। गहरा नैराश्य भाव था उसके स्वर में।

'लेकिन क्यों?'

और उसके बाद अनुराधा ने जो कुछ बताया वो अनुकूल के लिए अप्रत्याशित न था।

यहाँ से जाने के बाद अनुराधा दिल्ली पहुँची तो ऑफिस तैयार था, लेकिन उसके लिए उसमें कोई कक्ष न था। अनुराधा ने अभिषेक से इसके बारे में पूछा तो वो मुस्करा दिया। लेकिन ये मुस्कान सामान्य न थी। कुटिलता के भाव थे उसके चेहरे पर।

'तुम्हें अब यहाँ आने की आवश्यकता नहीं।'

'मजाक कर रहे हो अभिषेक।' अनुराधा के स्वर लड़खड़ा गए।

'नहीं भाभी! मजाक नहीं कर रहा। अब आप इस काम में साझीदार नहीं हैं।'

अनुराधा को ऐसे लगा जैसे उसने कुछ गलत सुन लिया। सारा ऑफिस उसकी आँखों के आगे गोल-गोल घूमने लगा। उसने पास में रखी कुर्सी थाम ली।

दरअसल अभिषेक को अब अनुराधा की आवश्यकता न थी। अनुराधा के रूप, गुण और अनुकूल के नाम का वह जितना फायदा उठा सकता था उतना उसने उठाया। और जब उसे नए साथी मिल गए तब अनुराधा को दूध में पड़ी मक्खी की तरह निकाल फेंका। अपनी अज्ञानता और अंधविश्वास के कारण अनुराधा सभी दस्तावेजों पर भी हस्ताक्षर कर चुकी थी। कोर्ट जाने से भी कुछ साबित न होने वाला न था।

अनुराधा रोई गिड़गिड़ाई, धमकी भी दी लेकिन अभिषेक पर कोई असर न हुआ। उसकी तो ये सोची-समझी चाल थी। और आखिरकार सब कुछ गँवा कर अनुराधा वापस लौट आई थी। इतने वर्षों की कमाई का ले-देकर एक फ्लैट था दिल्ली में, बस और कुछ नहीं।

ये सब बताते-बताते अनुराधा बुरी तरह से रो पड़ी। हिचकियों से उसका पूरा शरीर हिल रहा था। अनुकूल ने उसे चुप कराने का प्रयास नहीं किया।

अनुराधा रोती रही सिसकती रही। थक गई तो स्वयं ही चुप हो गई। अनुकूल भी चुप था। इस वक्त कुछ भी कुरेदना नहीं चाहता था वो। न ही उसे याद दिलाना चाहता था

कि कितनी बार उसने अभिषेक के प्रति उसे आगाह किया था? कितनी बार कहा था कि आगे बढ़ना बहुत अच्छा है लेकिन घर परिवार को इस तरह तिलांजलि देकर नहीं।

अनुराधा को ये सब बातें अब याद नहीं आ रही थी, ऐसा भी नहीं था। अभिषेक जब उसके साथ था उसने तब अनुकूल की एक न सुनी। इस ग्लानि से उसका चेहरा ऊपर न उठता।

अनुराधा की वापसी की खबर अनुकूल की माँ और भाभियों को मिली तो वो भी पहुँची अनुकूल को समझाने।

'अब क्यों आई है ये यहाँ? याद नहीं तुझे कैसी तेरी बीमारी में दुत्कार कर चली गई थी तुझे?'

अनुकूल चुप रहा। कुछ न बोला। बोलता तो बहस ही बढ़ती। क्या कहता उन्हें कि कुछ नहीं भूला वह। विवाह के पश्चात अनुराधा का प्यार भी याद है उसे और अनुकूल की बीमारी की हालत में इस घर को बचाने के लिए किया गया उसका संघर्ष भी याद है।

उन्नति करने की चाह में यदि कुछ समय के लिए वो भटक गई तो क्या उसे उसकी इस गलती के लिए क्षमा नहीं करना चाहिए?

अनुराधा के कानों में भी ये बातें पड़ी। क्या करेगा अनुकूल अब? उसकी आँखों के सामने बीता हुआ कल घूम गया। कितना प्यार करता था अनुकूल उसे। क्या कभी उसका बुरा चाह सकता था वो? लेकिन ऊँची उड़ान के सपनों ने अब तो उसके पंखों को ही कतर कर रख दिया था। क्या करेगी वह? कहाँ जाएगी?

कुछ दिन और बीत गए। अनुराधा अनुकूल के जवाब की प्रतीक्षा में थी। बच्चों को हॉस्टल से वापस बुलाने के लिए भी उसने कुछ न कहा था। शायद वह उन्हें वापस लाना ही नहीं चाहता होगा। क्या पता वह उसे भी उसके मायके वापस भेज दे।

आज शाम के समय अचानक ही मौसम खराब हो गया था। बादलों और बिजली की चमक-कड़क ने वातावरण में भीषण शोर पैदा कर दिया। सुबह का गया अनुकूल अभी घर न लौटा था। अनुराधा बेचैनी से इधर-उधर टहल रही थी। जैसा तूफान घर के बाहर था, वैसा ही तूफान उसके अंतर्मन में भी चल रहा था। अनुकूल ऊपर से तो शांत ही नजर आता था लेकिन उसके मन में क्या चल रहा था, अनुराधा इससे पूरी तरह अनभिज्ञ थी।

बाहर गाड़ी के रुकने की आवाज आई तो अनुराधा ने लपक कर दरवाजा खोल दिया। सामने अनुकूल खड़ा था और साथ में थे दोनों बच्चे। ये क्या हो रहा है अनुराधा समझ न सकी।

'तुम्हें और बच्चों दोनों को आश्चर्यचकित कर देना चाहता था मैं। वरना तुम लोगों के चेहरे पर इतनी खुशी कैसे देख पाता?'

अनुकूल ने कहा तो अनुराधा की आँखें छलछला आईं।

'अब तो बिजनेस करना भी सीख गई हो। दोहरा काम करना पडेगा तुम्हें अब। बच्चों को भी सँभालो और मेरा भी काम सँभालो।' अनुकूल मुग्ध भाव से अनुराधा को निहार रहा था।

अनुराधा निहाल हो उठी। दोनों बच्चों को गले से लगा वो फफक पड़ी। घर की दहलीज पार करने का दंड वह भुगत चुकी थी।

बादल छँटने लगे थे और उनके बीच से झाँकता चंद्रमा अपनी रोशनी बिखेर रहा था। ऐसी ही रोशनी का एक पुंज अनुराधा के जीवन में भी अपनी चमक बिखेरने को तत्पर था।